साखी का अभिप्राय

'साखी' शब्द का प्रयोग अपभ्रंश काल से होता चला आया है। नीति–काव्य की रचना में यह छंद सर्वाधिक लोकप्रिय रहा है। साखियों की रचना प्रायः दोहे नाम छंद में ही पायी जाती है। साखी शब्द से क्या अभिप्राय है। – डॉ. राम कुमार वर्मा 'साखी' को साथी का विकृत रूप मानते हैं। साथ ही ये प्रश्न उठाते हैं कि साथी किसकी है, किसके सामने हैं तथा इसका क्या रूप है। इसका उत्तर हमें कबीर के 'बीजक' में मिलता है। बीजक की अंतिम साखी में साखी का परिचय इस प्रकार दिया गया है–

साँखी आँसी की ज्ञान की समझि वेख, दन माँहि।

बिनु साखी संसार का, झगरा छूटत नाँहि।।

अर्थात् जब हम अज्ञान के अंधकार में भटकते हुए ज्ञान के प्रकाश की अपेक्षा करते हैं, तब साखी द्वारा ही हमें ज्ञान प्राप्त होता है। महात्मा पूरन साहेब ने साखी की गुरूमुख टीका करते हुए लिखा है – ''साखी कहिये साथी, सो बिना ज्ञान अंधा है'' इस टीका के आधार पर डॉ. रामकुमार वर्मा 'साखी' का अर्थ प्रत्यक्ष ज्ञान मानते हैं। यह प्रत्यक्ष ज्ञान गुरू शिष्य को प्रदान करता है। संत संप्रदाय में अनुभव जन्य ज्ञान की महत्ता है, शास्त्रीय ज्ञान की नहीं। इस प्रकार सत्य की साक्षी देता हुआ ही गुरू जीवन क तत्वज्ञान की शिक्षा जितनी प्रभावपूर्ण उतनी ही स्मरणीय भी।

साखी नीति का प्रधन छंद – साधारण रूप से साखी से अभिप्राय महापुरूष के अटल वचनों से ही माना जाता है। साक्षी को दोहे का ही प्रतिरूप माना जाता है। दोहा सबसे छोटा छंद है और नीति की बातें जब संक्षिप्त में कही जाए तो अधिक प्रभावशाली होती हैं। प्राचीन कवियों ने नीति कथन के लिए साखी व दोहे को ही उपयुक्त समझ इसका प्रयोग किया है। तुलसीदास, रहीम कबीर ने नीति की बातें दोहा में कहीं है।

कबीर का संपूर्ण नीति संबंधी उपदेश साखी छंद में मिलता है। कबोर के 'बीजक' में साखियो की संख्या 353 है। उनकी साखियाँ साधन और सामान्य लोकजीवन दोनों से संबंधित है। गुरूदेव को अंग, सुमिरन को अंग, विरह को अंग, ज्ञान–विरण को अंग, परचा को अंग आदि में उन्होंने अपनी साधना तथा उससे संबंधित बातों का विवेचन किया है। उन्होंने सीधी, सरल और प्रभावपूर्ण शैली और भाषा में जीवन के गहन तत्वों का विवेचन किया।

कबीर सांसारिक माया मोह में ग्रस्त प्राणियों का उद्‌बोधन दे रहे हैं –

कबीर सूता क्या करे, गुण गोविंद के गाई।

तेरे सिर पर जमखड़ा, खरच कदै का खाय।।

भगवान के विरहिजनों को कैसी भयंकर विरह वेदना सहनी पड़ती है, इसका वर्णन करते हुए कबीर कहते हैं –

अंदर कुजौ कुरलियाँ, गरिज भरे सब ताल।

जिन पै गौविंद बीछुटै, तिनके कौन हवाल।।

ज्ञान उदय होने पर प्राणी ब्रहम के विरह में ब्याकुल होने लगता है –

हिरदा भीतर दौ जल धुवाँ न परगट होय।

जाके लागी सो लखै कै जिहि लाई सोइ।।

यह संसार सेमल के फूल के समान है इसलिए इसमें अनुरक्त नहीं होना चाहिए।

यह संसार है जैसा सेबल फूल।

दिस दस के ब्यौहार कौ झूठै रंग न भूल।।

उपर्युक्त उदाहरणों द्वारा कबीर की साखियों का रूप स्पष्ट हो जाता है। उन्होंने साखियों के माध्यम से लोक–जीवन, लोक–व्यवहार आदि को अनुभवजन्य कर मनुष्य को सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी।